इन्द्रियाणि
पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः
परं मनः ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो
बुद्धेः परतस्तु सः
॥४२॥

इन्द्रियाणि - इन्द्रियों को; पराणि - श्रेष्ठ; आहुः - कहा जाता है; इन्द्रियेभ्यः - इन्द्रियों से बढकर; परम् - श्रेष्ठ; मनः - मन की अपेक्षा; तु - भी; परा -

श्रेष्ठ; बुद्धिः - बुद्धि; यः - जो; बुद्धेः - बुद्धि से भी; परतः - श्रेष्ठ; तु - किन्तु, सः - वह |

Text

कर्मेन्द्रियाँ जड़ पदार्थ की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं, मन इन्द्रियों से बढ़कर है, बुद्धि मन से भी उच्च है और वह (आत्मा) बुद्धि से भी बढ़कर है।

गीता भूषण टीका

“ आपने यह प्रदर्शित किया की काम को निष्काम कर्म योग में इन्द्रिय निग्रह के द्वारा नष्ट किया जा सकता है | यह बाँध में स्थित जल के समान है | परन्तु जब शरीर से सम्बंधित

क्रियाएं की जाती हैं (अर्थात जब नियत कर्मों को नहीं किया जा रहा हो) तब इन्द्रियों की स्वतंत्रता के साथ काम भी पुनः जागृत हो जायेगा जैसे बाँध से जल छुट जाता है |

भगवान् यहाँ इन दो श्लोकों में वही शिक्षा देंगे जो उन्होंने दूसरे अध्याय में दी थी की काम को आत्मा के साक्षात्कार के द्वारा ही पूर्ण रूप से नष्ट किया जा सकता है |

रसो 'प्य् अस्य परं

दृष्ट्वा (भगवद गीता 2.59).

विज्ञ जन यह कहते हैं की इन्द्रियाँ पञ्च महा भूतों से बने शरीर से श्रेष्ठ होती हैं |ऐसा इसलिए है क्योंकि वह शरीर की चालक हैं और

अधिक सूक्ष्म होती हैं और स्थूल शरीर के नाश के साथ नष्ट नहीं होती हैं | मन इन्द्रियों से श्रेष्ठ है क्योंकि मन इन्द्रियों को जागृत अवस्था में चलायमान करता है और सुप्तावस्था में मन राजा के सामान राज्य

करता है और इन्द्रियाँ उसमें प्रवेशित रहती हैं।

नोट: इन्द्रियाँ जो हमें भौतिक शरीर में दिखाई पड़ती हैं वे सूक्ष्म रूप से सूक्ष्म शरीर में भी स्थित रहती हैं और आत्मा के स्थूल देह परिवर्तन के

साथ ही नए स्थूल शरीर में उसके साथ जाती हैं |

बुद्धि मन से श्रेष्ट इसलिए है क्योंकि निश्चय जो की बुद्धि का कार्य है उसके द्वारा संकल्प इत्यादि मानसिक कार्य संपादित

होते हैं | जो इस बुद्धि से भी श्रेष्ट है वह जीवात्मा है जो चिद स्वरूप ही है | शरीर ,मन और बुद्धि से पृथक रूप में अनुभूत होने के द्वारा यह आत्मा, काम के पूर्ण निर्मूलन का कारण बनती है |

कठ उपनिषद में कथन है

1.3.10

इन्द्रियेभ्यः परा ह्य् अर्था अर्थेभ्यश् च परं मनः

मनसस् तु परा बुद्धिर् बुद्धेर् आत्मा महान् परः

यह अर्थ है : इन्द्रिय विषय , इन्द्रियों से श्रेष्ट हैं क्योंकि वे इन्द्रियों को आकर्षित करने में सक्षम होते हैं | मन इन्द्रियों से श्रेष्ट है क्योंकि यह विषयइन्द्रिय व्यवहार का मूल है | बुद्धि ,जो विवेक से युक्त है वह मन

से श्रेष्ट है क्योंकि एक विशिष्ट इन्द्रिय विषय से भोग प्राप्त होगा की नहीं यह निर्णय प्राप्त होने पर ही भोग का कार्य समपादित किया जाएगा |

भोक्ता जीव , बुद्धि से श्रेष्ट हैं क्योंकि यही भोग और अनुभव का कारण है | आत्मा महान है अर्थात वह शरीर,इन्द्रिय और अंत:करण की स्वामी होती है |

नोट : काम को पाप का कारण कहा जा सकता है परन्तु जीव उस काम का भोक्ता है | वह काम का कारण और उसका विनाशक भी है | जीव ,आत्मा के अनुभव के रस को जागृत करने के द्वारा काम का नाश

करता है | इसलिए भगवान् पाप या कर्म के कारण नहीं हैं |

साथ ही शरीर धारण करने हेतु जो क्रियाएं हैं वह एक आत्मा साक्षात्कारी पुरुष के लिए पूर्व अभ्यास के

द्वारा सम्पादित होंगी न की काम के पुर्नर प्राकट्य के द्वारा जैसे एक पहिया चलाये जाने के बाद भी घूमता रहता है।

Purport

इन्द्रियाँ काम के कार्यकलापों के विभिन्न द्वार हैं । काम का निवास शरीर में है, किन्तु उसे इन्द्रिय रूपी झरोखे प्राप्त हैं । अतः कुल मिलाकर इन्द्रियाँ

शरीर से श्रेष्ठ हैं । श्रेष्ठ चेतना या कृष्णभावनामृत होने पर ये द्वार काम में नहीं आते । कृष्णभावनामृत में आत्मा भगवान् के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करता है, अतः यहाँ पर वर्णित

शारीरिक कार्यों की श्रेष्ठता परमात्मा में आकर समाप्त हो जाती है । शारीरिक कर्म का अर्थ है - इन्द्रियों के कार्य और इन इन्द्रियों के अवरोध का अर्थ है - सारे शारीरिक कर्मों का अवरोध । लेकिन चूँकि

मन सक्रिय रहता है, अतः शरीर के मौन तथा स्थिर रहने पर भी मन कार्य करता रहता है - यथा स्वप्न के समय मन कार्यशील रहता है । किन्तु मन के ऊपर भी बुद्धि की संकल्पशक्ति होती है और बुद्धि के

ऊपर स्वयं आत्मा है । अतः यदि आत्मा प्रत्यक्ष रूप में परमात्मा में रत हो तो अन्य सारे अधीनस्थ - यथा - बुद्धि, मन तथा इन्द्रियाँ - स्वतः रत हो जायेंगे । कठोपनिषद् में एक ऐसा ही अंश है जिसमें कहा

गया है कि इन्द्रिय-विषय इन्द्रियों से श्रेष्ठ हैं और मन इन्द्रिय-विषयों से श्रेष्ठ है। अतः यदि मन भगवान् की सेवा में निरन्तर लगा रहता है तो इन इन्द्रियों के अन्यत्र रत होने की सम्भावना नहीं रह

जाती । इस मनोवृत्ति की विवेचना की जा चुकी है । परं दृष्ट्वा निवर्तते - यदि मन भगवान् की दिव्या सेवा में लगा रहे तो तुच्छ विषयों में उसके लगने की सम्भावना नहीं रह जाती । कठोपनिषद् में

आत्मा को महान कहा गया है । अतः आत्मा इन्द्रिय-विषयों, इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि - इन सबसे ऊपर है । अतः सारी समस्या का हल यह ही है कि आत्मा

के स्वरूप को प्रत्यक्ष समझा जाय ।

मनुष्य को चाहिए कि बुद्धि के द्वारा आत्मा की स्वाभाविक स्थिति को ढूंढे और फिर मन को निरन्तर कृष्णभावनामृत में

लगाये रखे। इससे सारी समस्या हल हो जाती है। सामान्यतः नवदीक्षित अध्यात्मवादी को इन्द्रिय-विषयों से दूर रहने की सलाह दी जाती है। किन्तु इसके साथ-साथ मनुष्य को अपनी बुद्धि का उपयोग

करके मन को सशक्त बनाना होता है । यदि कोई बुद्धिपूर्वक अपने मन को भगवान् के शरणागत होकर कृष्णभावनामृत में लगाता है, तो मन स्वतः सशक्त हो जाता है और यद्यपि इन्द्रियाँ सर्प के

समान अत्यन्त बलिष्ट होती हैं, किन्तु ऐसा करने पर वे दन्त-विहीन साँपों के समान अशक्त हो जाएँगी । यद्यपि आत्मा बुद्धि, मन तथा इन्द्रियों का भी स्वामी है तो भी जब तक इसे

कृष्ण की संगती या कृष्णभावनामृत में सदृढ नहीं कर लिया जाता तब तक चलायमान मन के कारण नीचे गिरने की पूरी सम्भावना बनी रहती है।

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ।

जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥४३॥

एवम् – इस प्रकार; बुद्धेः – बुद्धि से; परम् – श्रेष्ठ; बुद्ध्वा – जानकर; संसत्भ्य – स्थिर करके; आत्मानम् – मन

को; आत्मना – सुविचारित बुद्धि द्वारा; जहि – जीतो; शत्रुम् – शत्रु को; महा-बाहो – हे महाबाहु; काम-रूपम् –

काम के रूप में; दुरासदम् – दुर्जेय |

Text

इस प्रकार हे महाबाहु अर्जुन! अपने आपको भौतिक इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि से परे जान

कर और मन को सावधान आध्यात्मिक बुद्धि (कृष्णभावनामृत) से स्थिर करके आध्यात्मिक शक्ति द्वारा इस काम-रूपी दुर्जेय शत्रु को जीतो |

गीता भूषण टीका

मेरी इन शिक्षाओं के द्वारा , आत्मा का अनुभव करते हुए ,जो सुख और चिदघन है ,जो बुद्धि से पृथक और श्रेष्ट है क्योंकि यह शरीर

आदि सभी भौतिक वस्तुओं को क्रियान्वित करती है और मन को निश्चयात्मक बुद्धि के द्वारा इस सुख और चिदघन आत्मा में केंदित करते हुए इस काम रुपी शत्रु को नष्ट

कर दो यद्यपि इस नष्ट करना कठिन है |

नोट : आत्मा की और उन्मुख निष्काम कर्म और ज्ञान योग कद द्वारा व्यक्ति काम को जीत सकता है |

तुम महान भुजाओं वाले हो इस कारण से भौतिक रूप से विजय पाने में तुम सक्षम हो परन्तु अब इस काम को तुम्हें जीतना चाहिए |

यह तीसरा अध्याय वर्णन करता है की

व्यक्ति को मुख्य रूप से निष्काम कर्म योग और इससे उत्पान ज्ञान योग का गौण रूप से अभ्यास करना चाहिए ताकि आत्मा का दर्शन प्राप्त हो सके |

Purport

भगवद्गीता का यह तृतीय अध्याय निष्कर्षतः मनुष्य को निर्देश देता है कि वह निर्विशेष शून्यवाद को चरम-लक्ष्य न मान कर अपने आपको भगवान्

का शाश्वत सेवक समझते हुए कृष्णभावनामृत में प्रवृत्त हो | भौतिक जीवन में मनुष्य काम तथा प्रकृति पर प्रभुत्व पाने की इच्छा से प्रभावित होता है |

प्रभुत्व तथा इन्द्रियतृप्ति की इच्छाएँ बद्धजीव की परम शत्रु हैं, किन्तु कृष्णभावनामृत की शक्ति से मनुष्य इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि पर नियन्त्रण रख सकता है। इसके लिए मनुष्य को

सहसा अपने नियतकर्मों को बन्द करने की आवश्यकता नहीं है , अपितु धीरे-धीरे कृष्णभावनामृत विकसित करके भौतिक इन्द्रियों तथा मन से प्रभावित हुए बिना अपने शुद्ध स्वरूप के

प्रति लक्षित स्थिर बुद्धि से दिव्य स्थिति को प्राप्त हुआ जा सकता है | यही इस अध्याय का सारांश है | सांसारिक जीवन की अपरिपक्व अवस्था में दार्शनिक चिन्तन तथा यौगिक आसनों के

अभ्यास से इन्द्रियों को वश में करने के कृत्रिम प्रयासों से आध्यात्मिक जीवन प्राप्त करने में सहायता नहीं मिलती | उसे श्रेष्ठ बुद्धि द्वारा कृष्णभावनामृत में

प्रशिक्षित होना चाहिए |

इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय “कर्मयोग” का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ |